के. के. सरवन बाबू

बनाम

तमिलनाडु राज्य और अन्य

(2008 की आपराधिक अपील संख्या 1332)

22 अगस्त, 2008

[दलवीर भंडारी और हरजीत सिंह बेदी, न्यायमूर्तिगण]

निवारक निरोध - निरुद्ध व्यक्ति की अभिरक्षा उसके विरुद्ध भूमि हड़पने से संबंधित दो आपराधिक मामलों पर - आधारित थी- अभिनिर्धारित किया कि निरोध आदेश मनमाना, अवैध और अस्थिर है। भले ही आपराधिक मामलों के आधार पर निरोधक अधिकारिता को सही माना जावे, सार्वजनिक व्यवस्था को भंग करने का मामला नहीं बनता। तमिलनाडु बूटलेगर्स की खतरनाक गतिविधियों, ड्रग ऑफेन्डर्स, फॉरेस्ट ऑफेन्डर्स, गुंडा, अनैतिक यातायात अपराधी, रेत की खतरनाक गतिविधियाँ अपराधी, स्लम ग्रैबर्स और वीडियो पाइरेट्स की रोकथाम अधिनियम, 1982 की धारा 3(1)।

शब्द और वाक्यांश - 'लोक व्यवस्था' - का अर्थ निवारक निरोध के संदर्भ में है।

अपीलार्थी-निरुद्ध व्यक्ति को तमिलनाडू बूटलेगर्स की खतरनाक गतिविधियों, ड्रग ऑफेन्डर्स, फॉरेस्ट ऑफेन्डर्स, गुंडा, अनैतिक यातायात अपराधी, रेत की खतरनाक गतिविधियाँ अपराधी, स्लम ग्रैबर्स और वीडियो पाइरेट्स की रोकथाम अधिनियम, 1982 की धारा 3 (1) के तहत निरुद्ध किया गया था। निरोध भूमि हड़पने से संबंधित दो मामलों पर आधारित था। निरोध के प्रतिसंहरण की मांग वाला बंदी का प्रतिवेदन नामंजूर हो गया। उसके निरोध को खारिज करने की रिट याचिका भी खारिज हो गई इसलिए वर्तमान अपील प्रस्तुत की गई।

अपील की अनुमति देते हुए न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि:

1. लोक व्यवस्था को प्रभावित करने वाले मामले वह है जिसमें किसी विशेष इलाके की शान्ति और सम व्यवस्था को भंग करने की बहुत अधिक संभावना हो और उस निर्दिष्ट इलाके के समुदाय के जीवन की गति को बाधित करना है। बंदी के विरुद्ध पारित निरोध आदेश अवैध, मनमाना और अस्थिर था क्योंकि निरोध अधिकारिता द्वारा जिन मामलों के आधार पर निरोध किया गया था। उनके आरोपों को सही माना जावे तो भी लोक व्यवस्था को भंग करने का मामला नहीं बनता है यदि अनिवार्य था तो बंदी से साधारण दाण्डिक कानून के तहत निपटा जा सकता था। [पैरा 30, 31 और 32, 482-जी 483-डी, 482-ई, 483-सी,]

बृज भूषण और अन्य बनाम दिल्ली राज्य (1950) एससीआर 605; रोमेश थापर बनाम मद्रास राज्य (1950) एससीआर 594; डॉ. राम मनोहर लोहिया बनाम बिहार राज्य और अन्य। (1966) 1 एससीआर 709- अनुसरण किया गया।

अरुण घोष बनाम पश्चिम बंगाल राज्य (1970) 1 एससीसी 98; पुष्कर मुखर्जी और अन्य बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, ए.आई.आर. 1970 एससी 852; बाबुल मित्रा उर्फ अनिल मित्रा बनाम पश्चिम बंगाल राज्य और अन्य (1973) 1 एससीसी 393; दीपक बोस उर्फ नरीपदा बनाम पश्चिम बंगाल राज्य (1973) 4 एससीसी 43; कुसो साह बनाम बिहार राज्य और अन्य (1974) 1 एससीसी 185 और अशोक कुमार बनाम दिल्ली प्रशासन और अन्य। (1982) 2 एससीसी 403; पुलिस आयुक्त और अन्य बनाम सी. अनीता (श्रीमती) (2004) 7 एससीसी 467; आर. कलावती बनाम तमिलनाडु राज्य (2006) 6 एससीसी 14-पर निर्भर था।

रमेश यादव बनाम जिला मजिस्ट्रेट, एटा और अन्य। (1985) 4 एससीसी 232; बिनोद सिंह बनाम जिला मजिस्ट्रेट, धनबाद, बिहार और अन्य (1986) 4 एससीसी 416 और टी.वी. श्रवणन उर्फ एस.ए.आर. प्रसना वेंकटचारियार चतुर्वेदी बनाम राज्य जरिये सचिव एवं अन्य (2006) 2 एससीसी 664 संदर्भित किया गया।

संदर्भित न्यायिक दृष्टांत

(1950) एससीआर 605	अनुसरण किया	पैरा 15
(1950) एससीआर 594	अनुसरण किया	पैरा 16
(1966) 1 एससीआर 709	अनुसरण किया	पैरा 18
(1970) 1 एससी 98	इस पर भरोसा किया	पैरा 19
AIR (1970) एससी 852	इस पर भरोसा किया	पैरा 20
(1973) 1 एससी 393	इस पर भरोसा किया	पैरा 21
(1973) 4 एससीसी 43	इस पर भरोसा किया	पैरा 22
(1974) 1 एससीसी 185	इस पर भरोसा किया	पैरा 23
(1982) 2 एससीसी 403	इस पर भरोसा किया	पैरा 24
(1985) 4 एससीसी 232	में संदर्भित	पैरा 26
(1986) 4 एससीसी 416	में संदर्भित	पैरा 27
(2004) 7 एससीसी 467	इस पर भरोसा किया	पैरा 28
(2006) 6 एससीसी 14	इस पर भरोसा किया	पैरा 29
(2006) 2 एससीसी 664	में संदर्भित	पैरा 30

आपराधिक अपील क्षेत्राधिकार- दाण्डिक अपील सं. 1332/2008

मद्रास उच्च न्यायालय 2007 के एच.सी.पी. संख्या 1677 में पारित आदेश दिनांकित 29.04.2008 से।

श्री हुजेफा अहमदी, एस. वल्लीनायगम और वाई. राजा गोपाल राव, अपीलार्थी की ओर से ।

श्री टी.एल.वी. अय्यर, आर. नेदुमारन और वी.जी. प्रगसम उत्तरदाता की ओर से।

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति दलवीर भंडारी, जे. द्वारा दिया गया।

1. अनुमति प्रदान की गई।

2. यह अपील मद्रास उच्च न्यायालय के 2007 की बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका सं. 1677 में निर्णय दिनांकित 29 अप्रैल, 2008 के विरुद्ध निर्देशित है।

3. बंदी ने हिरासत के आदेश जो तमिलनाडु बूटलेगर्स की खतरनाक गतिविधियों, ड्रग ऑफेन्डर्स, फॉरेस्ट ऑफेन्डर्स, गुंडा, अनैतिक यातायात अपराधी, रेत की खतरनाक गतिविधियाँ अपराधी, स्लम ग्रैबर्स और वीडियो पाइरेट्स की रोकथाम अधिनियम, 1982 (1982 का तमिलनाडु एक्ट 14) की धारा 3 (1) के तहत आदेश संख्या 360/07 दिनांक 28.8.2007 के माध्यम से पारित किया गया, को चुनौती दी है।

4. निरुद्ध व्यक्ति सेंट थॉमस मांउट सेन्ट्रल क्राइल ब्रांच में पंजीकृत क्रिमिनल नंबर 70/2006 अन्तर्गत धारा 420, 465, 468 सपठित धारा 471 एवं 120बी भा0द0सं0 के अपराध मे लिप्त था और यह मामला

विचारण न्यायालय के समक्ष लम्बित था। इसके बाद उसके खिलाफ एक और प्रकरण वर्ष 2007 में सेन्ट्रल क्राईम ब्रांच चैन्नई शहर में अपराध संख्या 364/2007 अन्तर्गत धारा 420, 465, 466, 467, 468 सपठित धारा 471 एवं 120बी भारतीय दण्ड संहिता में भूमि हड़पने के मामले में दर्ज हुआ और उसकी गतिविधियां भूमि के मालिक और संभावित खरीददारों के हितों के प्रतिकूल बताई गई है। बंदी की कार्यप्रणाली दोनों ही मामलों में गुप्त तरीके से भूमि हड़पने की हैं निरोध करने वाले प्राधिकारी ने इस पक्ष को ध्यान में रखा और इस नतीजे पर पहुंचा कि बंदी को जमानत पर छोड़ा गया तो वह फिर से इसी प्रकार के मामलों में लिप्त हो जाएगा, इसलिए उसे निरुद्ध करना अनिवार्य है। निरोध का आदेश लोक जो भूमि के मालिक और सम्भावित खरीददार है; के कल्याण को ध्यान में रखते हुए जारी किया गया था।

5. यह उल्लेख करना उचित है कि बंदी के बहुत सारे जमानत आवेदन खारिज हुए थे तथा दिनांक 28.08.2007 को जब उस पर निरोध आदेश की तामील हुई तब वह पहले से ही जेल में था।

6. बंदी ने दिनांक 14.09.2007 को सचिव एवं सलाहकार बोर्ड के समक्ष निरोध आदेश को रद्द करने हेतु प्रतिवेदन प्रस्तुत किया जो दिनांक 14.10.2007 को नामंजूर कर किया गया। उसके बाद बंदी ने बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका निरोध आदेश को खारिज करने हेतु दायर की। यह

याचिका दिनांक 29.04.2008 को खारिज कर दी गई। उक्त आदेश से पीड़ित होकर बंदी ने इस न्यायालय के समक्ष विशेष अनुमति याचिका पेश की है, इस अदालत द्वारा जारी नोटिस के अनुसरण में प्रत्यर्थी द्वारा एक जवाबी हलफनामा दायर किया गया।

7. बंदी की ओर से श्री हुफेजा अहमदी, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि बंदी के विरुद्ध पारित निरोध आदेश अवैध और विधिनुसार अस्थिर हैं निरोध आदेश उपरोक्त वर्णित दो आपराधिक मामलों पर आधारित है। यदि दोनों आपराधिक मामलों में शामिल किए गए सभी आरोपों को सच माना जाता है तो भी यह नहीं कहा जा सकता कि बंदी लोक व्यवस्था के प्रतिकूल गतिविधियों में लिप्त था।

8. बंदी की ओर से तर्क दिया गया कि निरोध के आधार कानून और व्यवस्था की समस्या पर आधारित था। 'कानून और व्यवस्था तथा 'लोक व्यवस्था में अन्तर को इस न्यायालय द्वारा बहुत से न्यायिक निर्णयों में बहुत ही स्पष्ट रूप से परिभाषित किया गया है। इस न्यायालय के विभिन्न न्यायिक निर्णयों से स्पष्ट विधिक स्थिति दर्शित होती है कि यदि सभी आरोपों को सच मान लिया जावे तो भी बंदी की गतिविधियां लोक व्यवस्था के प्रतिकूल श्रेणी के मामले में नहीं आती है।

9. श्री अहमदी ने यह भी निवेदन किया कि उच्च न्यायालय के 'कानून ओर व्यवस्था तथा 'लोक व्यवस्था में अन्तर का विवेचन ठीक से

नहीं कर गंभीर रूप से भूल की है तथा बंदी द्वारा प्रस्तुत बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका को नामंजूर कर दिया।

10. श्री अहमदी का आगे तर्क रहा कि बंदी के तीन जमानत आवेदन नामंजूर किए गए थे तथा निरोध आदेश पारित हुआ तब कोई भी जमानत आवेदन लम्बित नहीं था इसलिए निरोध करने वाले प्राधिकारी द्वारा बंदी को जमानत पर छोड़े जाने की निकट संभावना बाबत् जताई गई आशंका रिकॉर्ड पर बिना किसी सामग्री के मात्र उसके स्वयं के कथन हैं।

11. श्री अहमदी ने निवेदन किया कि निरोध आदेश सकृत दर्शने मनमाना, अवैध, दुर्भावनापूर्ण और एक अप्रत्यक्ष उद्देश्य के साथ पारित किया गया हैं उन्होंने यह भी तर्क किया कि राज्य के गलत निरोध के कारण बंदी भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 और 22 के तहत निहित अपने मौलिक अधिकारों से वंचित कर दिया गया है।

12. तमिलनाडु राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री टी.एल.वी. अय्यर, ने निवेदन किया कि प्रायोजक अधिकारी द्वारा रखे गए सामग्री के मूल्यांकन के आधार पर व्यक्तिपरक सन्तुष्टि पर पहुंचने के बाद निरोध प्राधिकारी द्वारा निरोध आदेश लागू किया गया है।

13. श्री अय्यर ने आगे निवेदन किया कि बंदी के निरोध आदेश से अनुच्छेद 19, 21 और 22 (5) भारतीय संविधान के तहत प्रदत्त मूलभूत अधिकारों का हनन नहीं होता है श्री अय्यर ने तर्क दिया कि बंदी एक

स्लम ग्रैबर है तथा वह क्रिमिनल नं. 70/2006 अन्तर्गत धारा 420, 465, 468 सपठित धारा 471 एवं 120बी भारतीय दण्ड संहिता एवं अपराध संख्या 364/2007 अन्तर्गत धारा 420, 465, 466, 467, 468 सपठित धारा 471 एवं 120बी भारतीय दण्ड संहिता में लिप्त था तथा भूमि हड़पने के अपराध की गंभीरता को ध्यान में रखते हुए निरोध करने वाले अधिकारी ने सही रूप निरोध आदेश पारित किया है।

14. हमने उभय पक्ष के विद्वान अधिवक्ता को गम्भीरता से सुना और प्रकरण के रिकॉर्ड का सावधानीपूर्वक अवलोकन किया।

15. इस न्यायालय ने कई अवसरों पर 'कानून और व्यवस्था तथा 'लोक व्यवस्था की अवधारणाओं की जांच की है। भारतीय संविधान लागू होने के तुरन्त बाद इस न्यायालय की एक संवैधानिक बैंच ने बृज भूषण और अन्य बनाम दिल्ली राज्य 1950 एससीआर 605 में लोक व्यवस्था सम्बन्धी एक मामले को निपटाया था जिसमें कोर्ट ने कहा कि 'लोक व्यवस्था को 'लोक शान्ति के रूप में सन्दर्भित किया जा सकता है।''

16. अन्य प्रसिद्ध संवैधानिक बैंच निर्णय रोमेश थापर बनाम मद्रास राज्य (1950) एससीआर 594। इस न्यायालय का है। इस मामले में रोमेश थापर जो कि बॉम्बे में मुद्रित और प्रकाशित क्रॉस रोड्स नामक अंग्रेजी साप्ताहिक पत्रिका का मुद्रक, प्रकाशक और संपादक था, को मद्रास लोक व्यवस्था रखरखाव अधिनियम, 1949 के तहत निरुद्ध किया गया था। उस

निरोध आदेश को अनुच्छेद 32 के तहत रीट याचिका दायर करते हुए सीधे सर्वोच्च न्यायालय में चुनौती दी गई। आरोप यह था कि बंदी ने लोक शान्ति बाधित करने के लिए दस्तावेज प्रसारित किया तथा लोक व्यवस्था और शान्ति में बाधा कारित की।

17. अदालत ने कहाः-

".....'लोक व्यवस्था व्यापक अर्थ की अभिव्यक्ति है और शान्ति की उस स्थिति को दर्शाती है जो राजनीतिक समाज के सदस्यों में, सरकार द्वारा स्थापित आन्तरिक विनियमों के परिणामस्वरूप निहित है.....इसका अर्थ यह है कि 'लोक सुरक्षा का उपयोग 'लोक व्यवस्था की व्यापक अवधारणा के एक हिस्से के रूप में किया जाता है....."

18. 'लोक व्यवस्था एवं 'कानून और व्यवस्था के बीच अन्तर को इस न्यायालय की संवैधानिक पीठ द्वारा इस न्यायालय के निर्णय डा0 राम मनोहर लोहिया बनाम बिहार राज्य और अन्य 1966 एससीआर 709 में सावधानीपूर्वक परिभाषित किया गया हैं इस निर्णय में जस्टिस हिदायतुल्ला ने विभिन्न उदाहरण देते हुए 'लोक व्यवस्था तथा 'कानून और व्यवस्था को स्पष्ट रूप से परिभाषित किया हैं फैसले का प्रासंगिक हिस्सा इस प्रकार हैः-

> "....."क्या 'लोक व्यवस्था में हर प्रकार की अव्यवस्था को शामिल किया जाता है या केवल कुछ? इसका उत्तर 'लोक व्यवस्था एवं 'कानून और व्यवस्था को अलग करने

का काम करता है क्योंकि निस्संदेह उत्तरार्द्ध उन सभी को लेता है। यदि 'लोक व्यवस्था बाधित होती है तो लोक अव्यवस्था पैदा होनी चाहिए। शान्ति का प्रत्येक भंग लोक अव्यवस्था कारित नहीं करता है। जब दो शराबी आपस में लड़ते और झगड़ते है तो अव्यवस्था होती है लेकिन लोक अव्यवस्था नहीं होती हैं उनसे कानून और व्यवस्था बनाए रखने की शक्तियों के तहत निपटा जा सकता है परन्तु इस आधार पर उन्हें लोक व्यवस्था को बाधित करने के लिए निरुद्ध नहीं किया जा सकता। मान लिजिए दोनों लड़ने वाले व्यक्ति प्रतिद्वंद्वी समुदायों के थे और उनमें से एक ने साम्प्रदायिक भावनाओं को भड़काने की कोशिश की। समस्या अभी भी कानून और व्यवस्था की है लेकिन यह लोक अव्यवस्था का भय पैदा करता है अन्य उदाहरणो की परिकल्पना की जा सकती हैं। विधि का उल्लंघन हमेशा व्यवस्था को प्रभावित करता है लेकिन इसको लोक व्यवस्था का प्रभावित करने वाला कहा जा सकने से पहले इसका समुदाय और जनता को बड़े पैमाने पर प्रभावित करना आवश्यक है। मात्र कानून और व्यवस्था को बाधित करना अव्यवस्था कारित करता है इसलिए भारतीय रक्षा

अधिनियम के तहत कार्यवाही के लिए आवश्यक रूप से यह पर्याप्त नहीं है लेकिन बाधाएं जो लोक व्यवस्था को पलट दे वो इसके तहत आती है। एक जिला मजिस्ट्रेट नियम 30 (1)(बी) के तहत लोक व्यवस्था के विनाश को रोकने के लिए कार्यवाही करने का हकदार है लेकिन सामान्य परिस्थितियों में कानून और व्यवस्था को बनाए रखने के लिए यह सहायक नहीं है।

इस प्रकार यह प्रकट होता है कि 'लोक व्यवस्था में पहले उद्धृत इस न्यायालय के निर्णय अनुसार 'राज्य की सुरक्षा की तुलना में अव्यवस्थाओं की गम्भीरता कम होती है। 'कानून और व्यवस्था में अव्यवस्थाएं तुलनात्मक रूप से 'लोक व्यवस्था से कम गम्भीर होती है। इसको समझने के लिए तीन संकेन्द्रीत वृतों की कल्पना करनी होगी। सबसे बड़ा वृत कानून और व्यवस्था का प्रतिनिधित्व करता है, जिसके भीतर 'लोक व्यवस्था का वृत है तथा सबसे छोटा वृत राज्य की सुरक्षा का प्रतिनिधित्व करता है। अब यह देखना आसान है कि एक कृत्य ''कानून और व्यवस्था को प्रभावित कर सकता है लेकिन लोक व्यवस्था को नहीं। इसी प्रकार

एक कृत्य लोक व्यवस्था को प्रभावित कर सकता है परन्तु राज्य की सुरक्षा को नहीं.....''

19. अरुण घोष बनाम पश्चिम बंगाल राज्य (1970) 1 एससीसी 98 में न्यायमूर्ति हिदायतुल्ला को पुनः 'लोक व्यवस्था और 'कानून तथा व्यवस्था के प्रश्न का निपटारा करने का अवसर मिला। इस निर्णय में बहुत से उदाहरण देते हु ' ' ' '
अन्तर को समझाने के लिए बहुत गंभीर प्रयास किया गया है। जिसका प्रासंगिक भाग इस प्रकार हैः-

''.....लोक व्यवस्था के लिए कहा जाता है कि यह कानून और व्यवस्था की तुलना में बड़े समुदाय को शामिल करती है। लोक व्यवस्था समुदाय के जीवन की सम गति है जो देश के सम्पूर्ण या किसी विशिष्ट इलाके को शामिल करती है। लोक व्यवस्था को व्यक्ति विरुद्ध कृत्यों से अलग किया जाना चाहिए जो समाज को उस सीमा तक बाधित नहीं करती है जिससे कि लोक शांति को साधारणतया बाधित किया जावे। अशांति की मात्रा और एक इलाके में समुदाय के जीवन पर इसका प्रभाव जो यह निर्धारित करता है कि क्या अशांति केवल कानून और व्यवस्था का भंग है। उदाहरण के लिए, एक आदमी दूसरे को चाकू मारता है हो

सकता है लोग हैरान परेशान हो लेकिन समुदाय का जीवन समान गति से आगे बढ़ता रहा है भले ही बहुतों ने इस कृत्य को नापसंद किया हो। दूसरा मामला लेते है जहां शहर में साम्प्रदायिक तनाव है एक आदमी दूसरे समुदाय के सदस्य को चाकू मारता है यह अलग प्रकृति का कृत्य है। इसका प्रभाव गहरा है तथा यह जीवन की समगति को प्रभावित करता है तथा लोक व्यवस्था को भी खतरे में डालता है क्योंकि इस कृत्य के परिणाम में समुदाय का बड़ा वर्ग समाविष्ट होता है तथा उन्हें आगे और कानून तथा व्यवस्था को भंग करने के लिए और लोक व्यवस्था को पलटने के लिए उत्तेजित करता है। एक कृत्य अपने आप में अपनी गंभीरता का निर्धारक नहीं है। इसकी गुणवत्ता में यह एक दूसरे से अलग नहीं हो सकता है लेकिन इसकी क्षमता में यह अलग हो सकता है। लड़कियों पर हमले का मामला लीजिए। एक होटल में एक अतिथि चुंबन ले सकता है या आधा दर्जन चैम्बर का नौकरानियों के लिए अग्रिम भुगतान करे। यह उनको तथा प्रबंधन को परेशान कर सकता है लेकिन वह लोक व्यवस्था को बाधित नही करता हैं उसका अपने दोस्तों से जिनमें से एक लड़की हो से झगड़ा हो जाए

तो भी वह कानून और व्यवस्था के उल्लंघन का मामला होगा। एक अन्य मामला लीजिए जिनमें एक आदमी सुनसान जगह पर औरतों के साथ छेड़छाड़ करता है उसकी उक्त गतिविधियों के परिणामस्वरूप स्कूल और कॉलेज जाने वाली लड़कियों को लगातार खतरा और डर बना रहता है। अपने सामान्य व्यवसाय के लिए जाने वाली महिलों को रास्ते में रोककर हमले का डर रहता हैं। इस व्यक्ति की गतिविधि की मूल गुणवत्ता अन्य व्यक्ति को कृत्य से भिन्न नहीं है लेकिन इसकी क्षमता और लोक शांति पर इसका प्रभाव में बहुत अन्तर हैं सुनसान जगहों पर महिलाओं के साथ छेड़छाड़ करने वाले व्यक्ति का कृत्य जीवन की सम गति में बाधा कारित करता है जो कि लोक व्यवस्था का प्रथम आवश्यक तत्व हैं वह समाज और समुदाय को परेशान करता है उसका कृत्य सभी महिलाओं में अपने सम्मान के प्रति भय पैदा करता है और कहा जा सकता है कि वह लोक व्यवस्था को बाधित कर रहा है न कि केवल मात्र व्यक्ति विशेष के प्रति कृत्य जो कि दाण्डिक अभियोजन एजेन्सी द्वारा नोट किया जा सकता है इस प्रकार इसका मतलब यह है कि क्या एक व्यक्ति ने मात्र कानून और

व्यवस्था का उल्लंघन किया है या लोक व्यवस्था को बाधित करने वाला कृत्य किया है, का प्रश्न मात्रा तथा उस कृत्य की समाज पर पहुंच का प्रभाव का प्रश्न है.....''

20. 'लोक व्यवस्था और 'कानून तथा व्यवस्था की अवधारणा का निपटारा पुष्कर मुखर्जी एवं अन्य बनाम पश्चिम बंगाल राज्य एआईआर 1970 एससी 852 के मामले में किया गया है। इस प्रकरण में इस न्यायालय के कानूनी कत्तव्यों पर डॉ. एलन के महत्वपूर्ण कार्य पर भरोसा किया था और न्यायशास्त्र के क्षेत्र में सार्वजनिक और निजी अपराध के मध्य अन्तर को स्पष्ट किया था। अपराध के भौतिक तत्वों पर विचार करते हुए प्रत्येक समुदाय द्वारा लागू किये जाने वाले ऐतिहासिक परीक्षण आन्तरिक रूप से गलत और सामाजिक उपयोगिता जो दो सबसे महत्वपूर्ण कारक है जिसके द्वारा कुछ आचरण को अपराध के रूप में नामित किया गया है। डॉ. एलन ने सार्वजनिक और निजी अपराध को इस अर्थ में अलग किया है कि कुछ अपराध प्रथमतः विशिष्ट व्यक्तियों को क्षति कारित करता है और केवल द्वितीयक रूप में लोक हित को, जबकि अन्य सीधे लोक हित को क्षति कारित करते है और केवल दूर से व्यकितयों को प्रभावित करते है। उक्त पंक्तियों के साथ व्यापक अन्तर है लेकिन इस प्रकार के परीक्षण से स्वाभाविक रूप से अन्तर उत्पन्न होता है।

21. इस न्यायालय को बाबुल मित्रा उर्फ अनिल मित्रा बनाम पश्चिम बंगाल राज्य और अन्य 1973 एससीसी 393 में 'लोक व्यवस्था और 'कानून तथा व्यवस्था के प्रश्न का निपटारा करने का मौका मिला। न्यायालय ने पाया कि लोक व्यवस्था तथा कानून और व्यवस्था में वास्तविक अन्तर मात्रा का तथा समाज पर विवादित कृत्य के प्रभाव की पहुंच का हैं। न्यायालय ने इंगित किया कि कृत्य स्वयं ही अपनी गम्भीरता का निर्धारक नहीं हो सकता। यह गुणवत्ता में अलग नहीं हो सकता परन्तु इसकी क्षमता में यह बहुत अलग हो सकता है।

22. दीपक बोस उर्फ नरीपदा बनाम पश्चिम बंगाल राज्य (1973) 4 एससीसी 43, में इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने कानून और व्यवस्था तथा लोक व्यवथा के मध्य अन्तर को उदाहरण देते हुए समझाया है। जिसका प्रासंगिक भाग इस प्रकार है किः-

> ".....सार्वजनिक सड़क जैसे सार्वजनिक स्थल पर हर हमला जो पीडिता की मृत्यु में समाप्त हो को देखने वाले व्यक्तियों में भय और यहां तक कि दहशत और आतंक पैदा करता है। लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि इस प्रकार के सभी कृत्य आवश्यक रूप उस इलाके के, जिसमें वह घटित हुआ है सामुदायिक जीवन को बाधित करें तथा विस्थापित करे। हस्तगत प्रकरण में जिन दो मामलों को

आधार बनाया गया है उनमें ऐसा कुछ नहीं है जिसमें उनमें से कोई इस प्रकार का या इतना गम्भीर हो कि वह लोक व्यवस्था को नुकसान कारित करेगा। निसंदेह बताये गये आधारों के अनुसार उक्त दो कृत्य करने वाले व्यक्तियों द्वारा बॉम ले जाना बताया गया है। संभवतया यह सम्बन्धित पीड़ितों को भयभीत करने और उन्हें प्रतिरोध करने से रोकने के लिए किया गया था। लेकिन आधारों में यह नहीं बताया गया है कि उन्होंने उस इलाके में आतंक पैदा करने के लिए विस्फोट किया हो ताकि वहां रहने वालों को अपने सामान्य जीवन के कार्यों का पालन करने से रोका जा सके। इस प्रकार याचिकाकर्ता के विरूद्ध आरोपित दोनों घटनाएं विशिष्ट व्यक्तियों से सम्बन्धित है और इसलिए उक्त कृत्य कानून और व्यवस्था से सम्बन्धित है तथा इसके अन्तर्गत आता हैं इस तरह के कृत्यों के संबंध में कठोर अधिनियम के प्रावधानों का सहारा लेने पर विचार नहीं किया जाना है और इनको निपटाने के लिए सामान्य दाण्डिक विधि के प्रावधान पर्याप्त है।''

23. कुसो साह बनाम बिहार राज्य एवं अन्य (1974) 1 एसएससी 185 में इस न्यायालय ने लोक व्यवस्था के मुद्दे पर विचार किया है न्यायालय ने माना है कि:-

> "ये कृत्य कानून और व्यवस्था के लिए समस्या पैदा कर सकते है परन्तु उनका प्रभाव लोक व्यवस्था पर होना असम्भव है। दोनों अवधारणाएं अच्छी तरह से परिभाषित रूपरेखाओं वाली हैं जो अच्छी तरह से स्थापित है कि अवारा और असंगठित चोरी और हमलों के अपराध लोक व्यवथा के मामले नहीं है जब तक कि वे आमजन के जीवन के सम प्रवाह को प्रभावित नहीं करते हैं कानून का उल्लंघन कुछ हद तक अव्यवस्था पैदा करता है लेकिन प्रत्येक कानून का उल्लंघन आवश्यक रूप से लोक अव्यवस्था उत्पन्न नहीं करता।''

24. इस न्यायालय के अन्य महत्वपूर्ण प्रकरण अशोक कुमार बनाम दिल्ली प्रशासन और अन्य (1982) 2 एससीसी 403 में लोक व्यवस्था और कानून तथा व्यवस्था में अन्तर को स्पष्ट रूप से बताया हैं इस मामले में न्यायालय ने निम्नलिखित अनुसार माना है किः-

> ‘‘13. लोक व्यवस्था और कानून और व्यवस्था में वास्तविक अन्तर कृत्य की प्रकृति और गुणवत्ता का नहीं है बल्कि

समाज पर इसकी पहुंच की मात्रा और विस्तार में है। लोक व्यवस्था और कानून तथा व्यवस्था की दो अवधारणाओं के बीच का अन्तर ठीक हैं लेकिन इसका मतलब यह नही है कि उनमें परस्पर आच्छादन न हो। समान प्रकृति का कृत्य है लेकिन भिन्न संदर्भों एवं परिस्थितियों में कारित करने पर भिन्न-भिन्न प्रतिक्रियाएं कारित कर सकता हैं एक मामले में यह केवल मात्र व्यक्ति विशेष को प्रभावित कर सकता है और इसलिए कानून और व्यवस्था के तहत आ सकता है जबकि दूसरा लोक व्यवस्था को प्रभावित कर सकता है इस प्रकार कृत्य अपनी गम्भीरता का निर्धारक नहीं हो सकता। यह कृत्य की समुदाय के जीवन की समगति को बाधित करने की क्षमता है जो लोक व्यवस्था के रख रखाव के प्रतिकूल है.....''

25. यह देखना पड़ेगा कि क्या बंदी की गतिविधि ने स्थानीय समुदाय पर प्रभाव डाला है और जस्टिस हिदायतुल्ला के शब्दों में क्या बंदी के कृत्य ने उस विशिष्ट इलाके के समुदाय के जीवन की समगति को बाधित किया है?

26. श्री अहमदी, विद्वान अधिवक्ता ने याचिकाकर्ता की ओर से निवेदन किया था कि जब निरोध आदेश पारित किया गया था तब बंदी

जेल में था। उसके तीन जमानत आवेदन खारिज हो चुके थे उसका एक भी जमानत आवेदन लम्बित नहीं था इसलिए उसको न्यायालय द्वारा रिहा किए जाने की कोई नजदीकी संभावना नहीं थी। बंदी का जेल से बाहर आने की बात निरोध प्राधिकारी द्वारा बिना किसी रिकार्ड के की गई असमर्थित बात थी। निरोध करने वाले प्राधिकारी के पास कोई ठोस सामग्री नहीं थी जिसके आधार पर वे सन्तुष्ट कर सके कि बंदी जमानत पर रिहा होने वाला था। इस प्रकार के ठोस प्रमाण के अभाव में निरोध करने वाले प्राधिकारी का असमर्थित कथन मात्र निरोध आदेश को जारी रखने के लिए पर्याप्त नहीं है। विद्वान अधिवक्ता ने बंदी की ओर से रमेश यादव बनाम जिला मजिस्ट्रेट एटा और अन्य 1985 4 एससीसी 232 प्रस्तुत किया है जिसमें न्यायालय ने माना है कि:-

> "निरोध प्राधिकारी द्वारा निरोध आदेश इस आशंका के साथ जारी किया गया था कि बंदी जमानत पर रिहा होने की स्थिति में इलाके में फिर से आपराधिक गतिविधि जारी रखेगा। यदि निरोध प्राधिकारी की आशंका सही थी, तो जमानत आवेदन का विरोध करना चाहिए था और जमानत स्वीकार होने की स्थिति में उच्चतर अधिकारिता के समक्ष चुनौती दी जानी थी। मात्र इस आधार पर कि एक अपराधी जो विचाराधीन कैदी के रूप में निरुद्ध है को जमानत मिल

सकती, सामान्यतया राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम के तहत उसके विरुद्ध निरोध आदेश पारित नहीं किया जाना चाहिए हम याचिकाकर्ता के अधिवक्ता से सहमत है कि उक्त परिस्थितियों में निरोध आदेश स्थिर रहने योग्य नहीं है और इस न्यायालय द्वारा निवारक निरोध के विभिन्न मामलों में सुस्थापित सिद्धांतों के विपरीत है। इसलिए आक्षेपित आदेश निरस्त किया जाता है।''

27. श्री अहमदी, विद्वान अधिवक्ता ने आगे विनोद सिंह बनाम जिला मजिस्ट्रेट, धनबाद, बिहार व अन्य (1986) 4 एससीसी 416 का हवाला देते हुए कहा कि इस मामले में न्यायालय ने माना है कि:-

''7. हमारी संवैधानिक रूपरेखा में यह सुस्थापित है कि उचित प्राधिकारियों को प्रदत्त निवारक निरोध शक्तियों का प्रयोग आपवादिक मामलों में निवारक निरोध सम्बन्धित विभिन्न कानून के बहुत से प्रावधानों पर विचार करते हुए तथा बहुत ही सावधानीपर्वूक करना चाहिए। समाजिक सुरक्षा के लिए किसी व्यक्ति की निवारक अभिरक्षा हेतु आवश्यक तत्वों की जागरूकता होना आवश्यक हैं यदि एक व्यक्ति अभिरक्षा में है और उसके नजदीकी रिहाई की संभावना नहीं है तो निवारक निरोध शक्तियों का प्रयोग नहीं किया जाना

चाहिए। हस्तगत प्रकरण में जब वास्तविक निरोध आदेश बंदी पर तामील हुआ तब वह जेल में था ऐसा कोई संकेत नहीं है कि यह कारक या प्रश्न कि कथित बंदी रिहा किया जा सकता था या उसे रिहा किये जाने की संभावना थी, पर निरोध प्राधिकारी ने आदेश की तामील से पहले उचित रूप से तथा गम्भीरता से विचार किया था। यह अधिकारी का एक कोरा कथन मात्र अर्थात अप्रमाणित कथन है जो स्वयं उसने कहे हैं। यदि कोई ठोस प्रमाण यह सोचने के लिए होता कि बंदी रिहा हो सकता है तो वो प्रस्तुत किये जाने चाहिए थे। कानून और व्यवस्था तथा लोक व्यवस्था के लिए जिम्मेदार प्राधिकरण के पार्ट पर शाश्वत सर्तकता कीमत है जो इस देश का प्रजातन्त्र लोक अधिकारियों से नागरिकों की मौलिक स्वतन्त्रताओं की रक्षा के लिए प्राप्त करता है। निरोध में लेने वाले प्राधिकारी की ओर से प्रस्तुत शपथ पत्र में यद्यपि यह संकेत है कि बंदी के एक जेल से दूसरे में स्थानांतरण पर विचार किया गया था परन्तु निरोध आदेश की तामील की आवश्यकता पर निरोध प्राधिकारी द्वारा सुसंगत तथ्यों की रोशनी में उचित विचार नहीं किया गया था, जबकि बंदी अभिरक्षा में था। कम से कम मामले का

रिकॉर्ड यह इंगित नहीं करता है कि यदि यह स्थिति है तो फिर उस व्यक्ति के पूर्ववत्त को बदनाम किया जा सकता है, उपरोक्त सभी प्रासंगिक कारकों पर विचार किए बिना बंदी को निवारक अभिरक्षा में नहीं रखा जा सकता है। इसलिए, यद्यपि जब निरोध आदेश पारित किया गया था, वह अमान्य नहीं था और प्रासंगिक तथ्यों पर विचार के अनुसार आदेश की तामील उचित राय पर नहीं थी।"

28. कमिश्नर ऑफ पुलिस एवं अन्य बनाम अनिता श्रीमती (2004) 7 एससीसी 467, में इस न्यायालय ने पुनः लोक व्यवस्था और कानून और व्यवस्था के विषय की जांच की और पाया कि:-

"7..... महत्वपूर्ण मुद्दा यह है कि क्या बंदी की गतिविधि लोक व्यवस्था के विपरीत है। अभिव्यक्ति कानून और व्यवस्था का दायरा व्यापक है क्योंकि कानून का उल्लंघन हमेशा व्यवस्था को प्रभावित करता है, लोक व्यवस्था का दायरा संकीर्ण है और लोक व्यवस्था केवल ऐसे उल्लंघन से प्रभावित हो सकती है जो समुदाय या लोक को बड़े पैमाने पर प्रभावित करता हैं लोक व्यवस्था समुदाय जिसमें सम्पूर्ण देश या उसकी कोई विशिष्ट स्थानीयता शामिल है, के जीवन की समगति है। लोक व्यवस्था एवं

कानून तथा व्यवस्था में विवादित कृत्य की समाज तक विस्तार और उसकी मात्रा का अन्तर है। यह उस कृत्य की क्षमता है जो समुदाय के जीवन की समगति को बाधित करे जिससे कि लोक व्यवस्था के रखरखाव पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। यदि एक उल्लंघन का प्रभाव केवल प्रत्यक्ष रूप से शामिल कुछ व्यक्तियों तक ही सीमित है जो जनता के व्यापक दायरे से अलग है तो यह केवल कानून और व्यवस्था की समस्या को उत्पन्न करता है। यह एक गहराई/तीव्रता और परिणाम है; अव्यवस्था के एक विशेष विस्फोट से फैली आतंक की लहर का जो लोक व्यवस्था तथा कानून और व्यवस्था को प्रभावित करने वाले एक कृत्य में अन्तर करने में मदद करती है।'' प्रश्न जो पूछा जाना है किः-

‘‘क्या यह समुदाय के जीवन को इस हद तक बाधित करता है कि लोक व्यवस्था बाधित हो जाए या यह मात्र व्यक्ति विशेष को प्रभावित करता है जिससे समुदाय की शान्ति बाधित नहीं होती हैं।

यह प्रश्न प्रत्येक मामले में उसके तथ्यों के आधार पर किया जाना चाहिए।''

29. आर. कलावती बनाम तमिलनाडु राज्य (2006) 6 एससीसी 14, में इस न्यायालय ने लोक व्यवस्था को प्रभावित करने वाले मामले पर विचार करते हुए माना कि एकमात्र कृत्य भी जो लोक शान्ति और जीवन की समगति को प्रभावित करने वाली प्रवृति को हो, निरोध के लिए पर्याप्त होगा।

30. श्री अहमदी ने बंदी की ओर से न्यायिक दृष्टांत टी.वी. श्रवणन उर्फ एस.ए.आर. पर प्रसाना वेंकटचारियार चतुर्वेदी बनाम सचिव राज्य की ओर से और अन्य (2006) 2 एससीसी 664 को दर्शाते हुए कहा कि इस प्रकरण में न्यायालय ने पाया है कि जब बंदी पहले से ही अभिरक्षा में था, उसकी नजदीकी रिहाई की संभावना नहीं थी ऐसे में उसके विरूद्ध निरोध आदेश जारी करना उचित नहीं था। विधि का भी यह सुस्थापित सिद्धान्त है, परंतु तथ्यों को देखते हुए बंदी अपने तर्कों को अपनी हद तक साबित करने में सफल रहा है कि निरोध आदेश जो उसके विरुद्ध पारित किया गया है वो मनमाना अवैध और अस्थिर था क्योंकि यदि दोनों मामलों के आरोपों को सही मान लिया जावे, जिन पर निरोध प्राधिकारी ने भरोसा किया है, तो भी लोक व्यवस्था को बाधित करने का मामला नहीं बनता।

31. हमने इस महत्वपूर्ण मामले को लोक व्यवस्था तथा कानून और व्यवस्था सम्बन्धित मामले रोमेश थापर से लेकर नवीनतम मामला आर. कलावती (उपरोक्त) तक को ध्यान में रखते हुए निस्तारित करने की

कोशिश की हैं लोक व्यवस्था और कानून तथा व्यवस्था को तय करते समय इस न्यायालय की विचारधारा स्थिर रही है। विधि की सुस्पष्ट स्थिति के अनुसार लोक व्यवस्था के मामले वे है, जिनमें विशिष्ट इलाके की सुख-शान्ति को बाधित करने की वृहद क्षमता हो अथवा जस्टिस हिदायतुल्ला के शब्दों में जो उस विशिष्ट इलाके के समुदाय की जीवन की समगति को बाधित करे।

32. हस्तगत प्रकरण में निरोध के आधार बाबत दो मामलों का हवाला दिया गया है, जिनमें से एक मामला अपराध अन्तर्गत धारा 420, 465, 468 सपठित धारा 471 एवं 120बी आईपीसी में अपराध संख्या 70/2006 है। अन्य मामला अपराध संख्या 364/2007 अन्तर्गत धारा 420, 465, 466, 467, 468 सपठित धारा 471 एवं 120बी आईपीसी का हैं उपरोक्त दोनों मामले के तथ्यों का ध्यानपूर्वक जांच की गई है और यदि उपरोक्त मामलों के आरोपों को सही मान भी लिया जावे तो भी यह परिकल्पना नहीं की जा सकती कि बंदी ने ऐसा अपराध किया है जो लोक व्यवस्था के प्रतिकूल है। यदि अनिवार्य था तो बंदी से सामान्य दाण्डिक कानून के तहत निपटा जा सकता था।

33. मामले के उपरोक्त समस्त विवेचनानुसार, निरोध आदेश जो बंदी/याचिकाकर्ता के विरुद्ध पारित किया गया था वो अवैध, अस्थिर और खारिज किए जाने योग्य है और इसी प्रकर हम यह आदेश खारिज करते

है। जबकि हम बंदी की ओर से प्रस्तुत सीमित तर्कों के पर यह निरोध आदेश खारिज कर रहे है अतः अन्य अतिरिक्त तर्कों की जांच किया जाना आवश्यक नहीं है। इसी प्रकार निरोध आदेश निरस्त किया जाता है। यदि किसी अन्य मामले में आवश्यकता न हो तो बंदी तुरंत रिहा कर दिया जाए। तदनुसार अपील की अनुमति दी जाती है तथा मामला निस्तारित किया जाता है।

अपील की अनुमति दी गई।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी बबीता सैनी (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।